प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक

स्थापना वर्ष : 1948

युवा
बिना किसी कारण
के मुस्कराते हैं, यह
उनके प्रमुख आकर्षणों में
से एक है ...
- थॉमस ग्रे

अंग्रेज कवि, प्रोफेसर

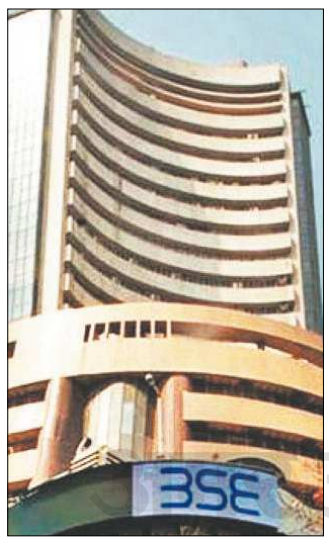

सेंसेक्स के 39,000 के अंकों को छूने से साफ है कि भारतीय शेयर बाजार फिलहाल पिछले कुछ महीने की अनिश्चितता से बाहर निकल आया है, जिसके आम चुनाव में सियासी मायने भी निकाले जा सकते हैं।

नई ऊंचाई पर

नए वित्त वर्ष के पहले दिन ही मुंबई शेयर बाजार के सूचकांक सेंसेक्स ने 39,000 अंकों की सर्वोच्च ऊंचाई को छूकर बाजार में उत्साह का संकेत दिया है। हालांकि एक समय यह 39,115.57 को छू गया था, लेकिन बाजार बंद होने के समय करीब ढाई अंक नीचे गिरकर 38,871 पर आ गया। इसके बावजूद इसका महत्व इसलिए है, क्योंकि 29 अगस्त को यह 38,989 अंक तक पहुंच चुका था और फिर इसके बाद इसमें उतार-चढ़ाव आता रहा है। इस हलचल के पीछे बाजार के अपने कारण तो जिम्मेदार थे ही, सियासी हलचल ने भी इसे प्रभावित किया जिससे फरवरी में इसमें आठ फीसदी तक गिरावट दर्ज की गई और यह 36,000 के नीचे तक चला गया था। लेकिन इसके बाद सेंसेक्स ही नहीं, राष्ट्रीय शेयर सूचकांक निफ्टी ने भी नई ऊंचाई को छुआ है और यह बाजार में बढ़ते उत्साह को ही दर्शाता है। दरअसल इस तेजी के पीछे तीन बड़े कारण हैं, एक तो यह कि बाजार के जानकार यह मानकर चल रहे हैं कि नरेंद्र मोदी की अगुआई में एनडीए चाहे कुछ कम सीटों के साथ ही सही, सत्ता में आ जाएगा; इसके पीछे हाल में आए कुछ चुनावी सर्वे को आधार माना जा रहा है। दूसरा, यह कि अमेरिका और चीन के बीच कई महीने से जो व्यापारिक गतिरोध बना हुआ था, वह दूर होता दिख रहा है, जिसका दुनिया के दूसरे बाजारों पर भी असर पड़ा है। इसके चलते एस ऐंड पी 500 अंकों के सूचकांक ने पिछले एक दशक के दौरान सर्वाधिक वृद्धि दर्ज करते हुए एक तिमाही में 13 फीसदी से अधिक की बढ़त हासिल की, तो नैस्डेक ने 2012 के बाद पहली बार 16.5 फीसदी की बढ़त दर्ज की है। तीसरी वजह है, भारतीय बाजार में विदेशी संस्थागत निवेशकों का लौटना और अब यह भी माना जा रहा है कि सेंसेक्स के 39,000 के मनोवैज्ञानिक स्तर को छूने के बाद उनका विश्वास भारतीय बाजार में और बढ़ेगा। निश्चित रूप से भारतीय शेयर बाजार पिछले कुछ महीने की अनिश्चितता से फिलहाल बाहर निकल आया है। बाजार ने ऐसे समय नई ऊंचाइयों को छुआ है, जब दो दिन बाद रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति से संबंधित कमेटी की द्विमासिक बैठक होने वाली है, लिहाजा बाजार की आगे की दिशा इसके भावी कदम पर भी निर्भर करेगी।

कितने स्वतंत्र हैं भारतीय युवा

भारत में उभरते वयस्क माता-पिता के प्रति जिम्मेदारी निभाने के साथ-साथ परिवार से स्वतंत्रता और स्वायत्तता भी हासिल करते हैं। अपनी पहचान तलाशने और आत्मनिर्भर बनने को ये अपनी प्राथमिकता बनाते हैं।

दीया मित्रा

वर्ष 1980 से 1999 के बीच जन्मे बच्चों को आत्ममुग्ध पीढ़ी बताया जाता है। उन्हें गलत तरीके से वर्णित किया जाता है, स्टीरियोटाइप समझा जाता है और उनकी प्रशंसा नहीं की जाती। उन्हें अक्सर गैरजिम्मेदार और आलसी युवा समझा जाता है। लेकिन अपने खर्च करने की आदत के कारण ऐसे युवाओं ने हाल के दौर में मीडिया का ध्यान खींचा है और यह कयास लगाया जा रहा है कि वे अब तक की तमाम पीढ़ियों में सबसे निराश-हताश तो नहीं हैं। ये लोग तेजी से बदलते वैश्वीकृत समाज में पले-बढ़े हैं और अपने बाप-दादाओं के विपरीत उन्हें संक्रमण काल से वयस्कता की ओर बढ़ते हुए विकास संबंधी चुनौतियों के अलावा आधुनिक समय की बढ़ती मांगों के साथ भी तालमेल बिठाना पड़ा है। बीस साल की उम्र के युवा अपने मनोवैज्ञानिक विकास के महत्वपूर्ण चरण में होते हैं, जिन्हें हमारे समर्थन की जरूरत होती है, उपहास की नहीं।

सहस्राब्दी की शुरुआत में जीवन संबंधी मनोविज्ञान के क्षेत्र में आमूल परिवर्तन देखा गया। वयस्कता के विकास पर शोध की जरूरत महसूस करते हुए इस दिशा में प्रयास हुए। इस तरह के एक प्रयास ने अमेरिका में उभरती वयस्कता के सिद्धांत को जन्म दिया और 18 से 29 की अवधि को एक नया जीवन-चरण प्रस्तावित किया गया। सांस्कृतिक परिदृश्य में महत्वपूर्ण बदलाव (यौन क्रांति, महिलाओं के आंदोलन, ज्ञान आधारित अर्थव्यस्था के लिए बदलाव) के साथ हाई स्कूल की पढ़ाई खत्म करने और वयस्क भूमिका प्राप्त करने के बीच खाई बढ़ती गई। वयस्कता की स्थिति के ये चिह्न (वित्तीय स्वतंत्रता, एक स्थायी रोजगार की तलाश और विवाह करना) विभिन्न संस्कृतियों में अलग-अलग होते हैं। विकसित देशों में जहां इसका विस्तृत अध्ययन किया गया है, वहीं भारत में इस संबंध में शोध की अभी बस शुरुआत ही हुई है।

भारत ने 1990 के दशक में सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में तेज शुरुआत के बाद सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र में तेजी से बदलाव का अनुभव किया है। तेज औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण का आबादी पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। भारत में उभरती वयस्कता तेजी से प्रचलित हो रही है, क्योंकि युवाओं के पास शिक्षा, उच्च वेतन वाली नौकरियां और प्रेम व विवाह में ज्यादा स्वायत्तता प्राप्त है। इसके अलावा बेहतर अवसर की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में युवाओं का सामूहिक पलायन हुआ है, जिसने सामाजिक गतिशीलता को मंजूरी दी है। बदलती सामाजिक-सांस्कृतिक धाराओं और खत्म होती जाति प्रथा के साथ भारत एक नए अध्याय की ओर बढ़ रहा है।

पिछले एक दशक में भारत के शहरी मध्यवर्ग के परिवारों में बदलावों का सिलसिला शुरू हुआ है। वैश्वीकरण, बढ़ते शहरीकरण और बदलते सामाजिक परिवेश के चलते भारत के उभरते वयस्क बहुत-सी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। इसने वयस्कता प्राप्त करने के अनुभव को मौलिक रूप से बदल दिया है। विभिन्न संस्कृतियों में वयस्कता प्राप्त करने के सर्वोच्च मानदंडों में से एक है स्वतंत्र फैसला लेने की क्षमता। इसका बाद के जीवन पर दीर्घकालीन प्रभाव पड़ता है, जिसमें आर्थिक सफलता, सुचारु जीवन बिताना और अंत में सफल बुढ़ापा शामिल है। हालांकि भारत में पारिवारिक दायित्वों और सामाजिक अपेक्षाओं की अब भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है, ऐसे में उभरते वयस्क आसानी से स्वतंत्र निर्णय नहीं ले पाते।

उत्तर-औपनिवेशिक यूरो-केंद्रित संस्कृति में भारतीय युवा इस बदलते परिदृश्य के बीच आत्म और पहचान के आख्यानों को पुनर्परिभाषित कर रहे हैं। भारत में एकल परिवार के आम होते जाने के साथ-साथ पारिवारिक विचारधारा में बदलाव हुए हैं, जो उभरते वयस्कों के बीच फैसले लेने में माता-पिता और बच्चों के बीच बातचीत की अनुमति देते हैं। यह पुरानी परंपरा से उत्पन्न जड़ता और परिवर्तन के दबाव के बीच पारस्परिक क्रिया को चित्रित करता है।

मेरे हालिया शोध का निष्कर्ष बताता है कि भारत में उभरते वयस्क माता-पिता के प्रति जिम्मेदारी निभाने के साथ-साथ परिवार से स्वतंत्रता और स्वायत्तता भी हासिल करते हैं, जो जिंदगी के इस क्षण का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। खोज से उनके माता-पिता के प्रति प्रतिबद्धता का तो पता चलता ही है, इसका भी संकेत मिलता है कि व्यक्तिगत जीवन के विकल्प माता-पिता की देखभाल करने की क्षमता को बाधित नहीं करेंगे। भारत के उभरते हुए वयस्क आज भी अपनी पहचान तलाशने और आत्मनिर्भर बनने को उच्च प्राथमिकता पर रखते हैं।

उसके बाद वित्तीय सुरक्षा, शिक्षा और करियर भी महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं। ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था के प्रति भारत के झुकाव में वृद्धि के साथ ज्यादा उन्नत डिग्री, व्यक्तिवादी आदर्शों से परिचय, बेहतर संभावनाओं के लिए बड़े शहरों की ओर पलायन को महत्व दिया जाता है। ये निष्कर्ष भारत के शहरों में रहने वाले 18 से 29 वर्ष के मध्य और उच्च वर्ग के शिक्षित युवाओं पर केंद्रित हैं और ये उन भारतीय युवाओं की भावना को प्रतिबिंबित नहीं कर सकते, जो ग्रामीण और कृषि क्षेत्र में रहते हैं।

पश्चिम की तुलना में भारत के उभरते हुए वयस्क कुछ अलग हैं। भारत के उभरते वयस्क न केवल अपने माता-पिता के महत्व को पहचानते हैं, बल्कि परिवार के प्रति अपनी जिम्मेदारी भी निभाते हैं। अनुकूल परिणाम सुनिश्चित करने के लिए भारत के उभरते वयस्कों के निर्णय लेने की प्रक्रिया के बारे में जानना महत्वपूर्ण है, जो एक सर्वे से संभव नहीं है। इन्हें उस एजेंसी को पहचानने की आवश्यकता होती है, जो जीवन लक्ष्य के प्रति उनके निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल होती है, विशेष रूप से तब, जब भारत जैसे समुदाय-केंद्रित समाज की बात हो। इस शोध के निष्कर्षों ने सांस्कृतिक मानदंडों के पुनर्गठन के लिए वैश्वीकरण के समाजशास्त्रीय प्रभावों को प्रकाश में लाया है-कि सफलता को मापने के लिए पैमाने में बदलाव की आवश्यकता है। मीडिया में इन उभरते वयस्कों को पेश करने के ढंग और उनके आदर्शों व लक्ष्यों की वास्तविकता में विसंगति है।

लेखिका क्लार्क यूनिवर्सिटी, मैसाचूसेट्स में शोधार्थी हैं।

अंतर्ध्वनि

>> केदारनाथ अग्रवाल

बचपन में ही कविता का संसार मोहक लगने लगा

कविता मेरे घर में पहले से थी। मेरे पिता ब्रजभाषा और खड़ी बोली में कविता लिखते थे। मेरी चौपाल में आल्हा संगीत होता था। मेरे मैदान में रामलीला खेली जाती थी। उसका प्रभाव मन-मस्तिष्क पर पड़ता था। कविता में मेरी रुचि बढ़ने लगी और मैंने पद्माकर, जयदेव और गीत गोविंद पढ़ा। इसी तरह की मानसिकता बनने लगी। इस तरह कविता मेरे अंदर पैठ गई और वह मेरे इंद्रियबोध को संवेदनशील बनाने लगी। अपने को व्यक्त करने की लालसा जागृत होने लगी कि मैं भी कुछ लिख सकूं, तो अच्छा लगेगा। गांव में और कोई सुख नहीं था, खाओ, पीओ और स्कूल जाओ। मिडिल तक स्कूल था। टीचर मेरे घर आते थे। भीतर-बाहर इस तरह कविता का संसार, मोहक संसार लगने लगा। सौंदर्य को, मानवीय सौंदर्य को, प्रकृति के सौंदर्य को देखने की लालसा जगी। आज कविता को नंगा कर दिया गया है, उसकी रीढ़ तोड़ दी गई है, उसे हर तरह से अपंग कर दिया गया है। उसकी स्वर और ध्वनियां छीन ली गई हैं। उसे भाषायी संकेतबद्धता से वंचित कर दिया गया है, उसे कवि के अचेतन मस्तिष्क में ले जाकर ऊलजलूल में भरपूर भुला-भटका दिया गया है। अब आज जब सब दफ्तर के बाबू हो गए हैं, छोटे, बड़े नगरों में खोए हुए हैं, जनता से कट चुके हैं, बोलने में बुदबुदाते हैं, लिखने को कविता लिखते हैं मगर कविता नहीं लिखते हैं, नए-नए वाद-विवाद के चक्कर में डालडा के खाली डिब्बे पीटते हैं। करते कुछ नहीं, काफी हाउस में बकवास करते हैं। पराये (विदेशी कविता) की नकल में अकल खर्च करते हैं और कविता को अपनी तरह बेजान बनाते हैं। भाषा को चीर-फाड़कर चिथड़े-चिथड़े कर देते हैं। लेकिन कवि चेतन सृष्टि के कर्ता हैं। हम कवि लोग ब्रह्मा हैं। मैं उसी की लड़ाई लड़ रहा हूं।

-दिवंगत हिंदी कवि

मंजिलें और भी हैं

>> बृजेश सरोज

सब्जियां बेचता था, आज आईआईटी, मुंबई में हूं

मैं उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जिले के एक गांव में पैदा हुआ। दलित होने के कारण हमारी आर्थिक स्थिति कभी बहुत अच्छी नहीं रही। मेरे पिता गुजरात के सूरत में बुनकर हैं, जिनकी आय आठ से दस हजार रुपये के बीच है। हम छह भाई-बहन और दादा-दादी के भरे-पूरे परिवार के लिए यह आय बेहद मामूली थी। इस कारण बेहद कम उम्र में ही मुझे लोगों के खेतों में काम करने जाना पड़ता था। कुछ समय तक मैंने सब्जियां बेचीं और शादी-ब्याह में टेंट लगाने तक का काम करना पड़ा। इसके बावजूद मैं पढ़ने-लिखने में अच्छा था और अपनी पढ़ाई को बेहद गंभीरता से लेता था। लेकिन परिवार की आर्थिक स्थिति को देखते हुए मैं समझ नहीं पाता था कि आगे पढ़ाई कर भी पाऊंगा या नहीं। लेकिन स्कूल में मेरे शिक्षकों ने हमेशा मेरा मार्गदर्शन किया। इसी का नतीजा था कि मुझे जवाहर नवोदय विद्यालय में प्रवेश मिल गया। नवोदय विद्यालय में जाने के बाद मैंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। गांव के स्कूल में पढ़ता था, तो मजदूरी करने के कारण रोज समय पर स्कूल पहुंचने की गारंटी नहीं थी। लेकिन नवोदय विद्यालय में मेरी अलग दुनिया थी। वहां जाकर खुद मैंने भी शिक्षा के महत्व को गंभीरता से समझा।

गांव में लोग मुझ पर पत्थर फेंकते थे, आज पढ़ाई के साथ मैं सैकड़ों गरीब बच्चों की मदद भी कर रहा हूं।

बारहवीं के बाद दक्षिणा फाउंडेशन की मदद से मैं आनंद कुमार की सुपर-30 में पहुंच गया। आनंद कुमार सर गरीब बच्चों को बहुत मेहनत से पढ़ाते और रास्ता दिखाते हैं। सुपर-30 में एक साल की कोचिंग के बाद मेरा चयन आईआईटी, मुंबई में हो गया। मेरे साथ मेरे छोटे भाई का भी आईआईटी में चयन हुआ। मेरे परिवार के लिए यह खुशी का अवसर था, हालांकि गांव के सवर्ण लोग इससे खुश नहीं थे। जब मैं घर से बाहर निकलता, तो मुझ पर पत्थर फेंककर वे अपना आक्रोश जाहिर करते। हालांकि फीस के लिए दो लाख रुपये जुटाना हमारे लिए बहुत मुश्किल था। आईआईटी में दाखिला हो जाने पर मेरे तमाम रिश्तेदार मेरे घर आए थे। लेकिन वे मेरी फीस के रुपये का इंतजाम नहीं कर पाए, क्योंकि उनकी खुद की जिंदगी जैसे-तैसे चलती है। हारकर मेरे पिता ने कुछ लोगों से पैसे मांगे। लेकिन उसी समय कुछ कॉरपोरेट कंपनियां मेरे बारे में जानकर मेरी मदद के लिए आगे आईं और मेरा काम आसान हो गया।

आईआईटी में प्रवेश के बाद मैं बेहद खुश था। लेकिन जिस तरह मुझे मदद मिली, उसने मुझे एक अजीब भावना से भर दिया। मैंने सोच लिया कि जिस तरह लोगों ने मेरी मदद की, वैसे ही मैं अब दूसरे गरीब बच्चों की मदद करूंगा, जिससे कि वे भी अपने जीवन में मेरी तरह सफल बनें। अच्छी शिक्षा और लोगों की सहायता से मैं तो यहां पहुंच गया, लेकिन गांवों में मेरे जैसे हजारों-लाखों बच्चे हैं, जिन्हें अवसर और मार्गदर्शन की जरूरत है। इसी उद्देश्य से गरीब बच्चों के हक में मैंने अपने कुछ साथियों की मदद से गृह जिले प्रतापगढ़ में समदर्शी फाउंडेशन नाम से एक संगठन की स्थापना की। मुंबई में अभिनेता आमिर खान ने मुझसे मुलाकात की, तो मुझे बहुत अच्छा लगा। फिर मैंने कल्याण इलाके में भी अपनी यह संस्था खोली। इन दोनों संस्थाओं में गरीब बच्चों की पढ़ाई का स्तर ऊंचा किया जाता है, ताकि ये बच्चे जवाहर नवोदय विद्यालय और सैनिक स्कूल जैसे प्रतिष्ठित स्कूलों में दाखिला लेकर अपने अंदर छिपी प्रतिभा निखार सकें। मेरा भविष्य तो सुरक्षित हो गया है, लेकिन मेरा लक्ष्य है कि मैं पूरी जिंदगी गरीब बच्चों के हक में काम करता रहूं।

-विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित।

अर्थशास्त्र पर हावी राजनीति

भारतीय अर्थव्यवस्था आज भी नकद आधारित है और यह पता लगाना कि किसकी न्यूनतम आय कितनी है, टेढी खीर है, क्योंकि छोटे भुगतान नकद के जरिये ही होते हैं। कांग्रेस की न्यूनतम आय गारंटी योजना में कई पेच हैं, जिनके बारे में स्पष्टता नहीं है।

पिछले कुछ दशकों से भारतीय राजनीति में एक खास बात देखने में आ रही है और वह है सरकारी खजाने से वोटरों को लुभाने-ललचाने का प्रयास। उसी कड़ी में है कांग्रेस की न्यूनतम आय गारंटी योजना, जिसके तहत 12,000 रुपये सालाना कमाने वाले परिवार को 6,000 रुपये प्रति माह यानी 72,000 रुपये सालाना मिलेंगे। भारत में प्रोत्साहन, सब्सिडी, उपहारों की चुनाव के दौरान घोषणा होती रहती है और क्षत्रप हमेशा इसमें आगे रहते हैं, क्योंकि उनके लिए वोट राजस्व से ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है। यह पहला मौका है कि अर्थशास्त्रियों से भरी हुई कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष ने ऐसी बड़ी घोषणा की है कि सभी हैरान हैं, क्योंकि इससे देश पर लगभग 3.60 लाख करोड़ रुपये का बोझ पड़ेगा। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि जब एनडीए सरकार ने छोटे और सीमांत किसानों के लिए सालाना 75,000 करोड़ रुपये देने की घोषणा की थी, तो पूर्व वित्त मंत्री पी चिदंबरम ने इसे किसानों को दी जाने वाली रिश्वत बताया था।

तमिलनाडु के पूर्व मुख्यमंत्री एमजी रामचंद्रन ने मिड डे मील और सस्ता चावल गरीबों को देने की योजना बनाई थी, जिससे राज्य में कोई भूखा नहीं रह सके। इसके बाद कई राज्य इसके नक्शे कदम पर चलते हुए और आगे बढ़ गए। इंदिरा गांधी ने 1971 में गरीबी हटाओ का नारा दिया। पर इसके लिए बजट में कोई प्रावधान नहीं रखा। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में इसकी चर्चा तो की गई, पर कहा गया कि देश में इन्फ्रास्ट्रक्चर, कृषि वगैरह को बढ़ावा दिया जाएगा, ताकि समृद्धि आए। यह टिकलिंग इफेक्ट की अवधारणा का हिस्सा था, यानी ऊपर के तल पर पर समृद्धि आने से उसका

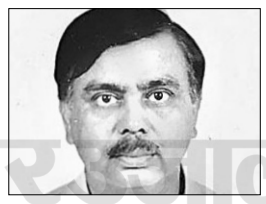

मधुरेन्द्र सिन्हा

कुछ हिस्सा रिसकर नीचे भी जाएगा। यह सिलसिला चलता रहा और गरीबी दूर नहीं हुई। इसके बाद देश की राजनीति में क्षत्रपों का वर्चस्व बढ़ता गया और वोट बैंक की राजनीति के तहत लोगों को लुभावने वादे किए जाने लगे। दक्षिण भारत इस मामले में आगे रहा और वहां बड़े पैमाने पर उपहार आदि की घोषणा की जाती रही। उत्तर प्रदेश में अखिलेश सरकार ने छात्रों को लैपटॉप तथा नीतीश कुमार ने बिहार में लड़कियों को साइकिल बांटी। पर नकद बांटने की बात किसी ने कभी नहीं की। नकदी यदि बंट रही थी, तो चुपचाप और वह भी पार्टियों द्वारा।

इस देश में कृषि, शिक्षा और स्वास्थ्य पर हम आज भी बहुत कम खर्च करते हैं और गैर उत्पादक योजनाओं में काफी बड़ी राशि खर्च करते हैं। आज भी कई तरह की सब्सिडी दी जा रही है, जिसका असर राजस्व घाटे पर पड़ता है। अगर कांग्रेस यह योजना लागू करती है तो राजस्व घाटा नई ऊंचाइयों पर चला जाएगा। ऐसा भी हो सकता है कि एनडीए सरकार द्वारा शुरू की गई कई योजनाएं खत्म कर दी जाएं। यहां पर मनरेगा का जिक्र होता है, लेकिन वह एक बढ़िया स्कीम साबित हुई है, खासकर उन राज्यों में जहां ग्रामीण मजदूरों को धन के अभाव से जूझना पड़ता था।

अभी तो यह देखना है कि इसके आर्थिक प्रभाव क्या हो सकते हैं? एक और बात है कि बिना किसी तरह के डाटा के यह योजना लागू कैसे होगी? भारतीय अर्थव्यवस्था आज भी नकद आधारित है और यह पता लगाना, कि किसकी न्यूनतम आय कितनी है, टेढी खीर है, क्योंकि छोटे भुगतान नकद के जरिये ही होते हैं। दुकानों, छोटे होटलों, घरों, खेत-खलिहानों, लघु उद्योगों वगैरह में काम करने वालों की आय का आंकड़ा कैसे मिलेगा? लाखों रिक्शा चालकों की आय का आंकड़ा कहां से मिलेगा? इनकी आय तो घटती-बढ़ती ही रहती है। देश में न्यूनतम मजदूरी औसतन 300 से 400 रुपये प्रतिदिन है और महीने में यह 9,000 रुपये से भी कहीं ज्यादा होगी, लेकिन यह सारा पारिश्रमिक नकद में ही दिया जाता है। फिर दोहराव को कैसे रोका जाएगा? इसमें कई पेच हैं, जिनके बारे में अभी स्पष्टता नहीं है। फिलहाल तो यह कागजी ही है।

हरियाली और रास्ता

निशा मैडम, बच्चे और पहाड़ा

निशा मैडम की कहानी, जिसने नौ के पहाड़े के जरिये बच्चों को जीवन की एक महत्वपूर्ण सीख दी।

निशा मैडम की पांचवीं कक्षा में पहली क्लास थी। पहली बार बच्चे उनसे मिल रहे थे। क्लास में घुसते ही बोर्ड पर वह कुछ लिखने लगीं। निशा मैडम बोर्ड पर नौ का पहाड़ा लिख रही थीं। पर उन्होंने नौ दूनी सोलह लिखा। वह पहाड़ा पूरा करतीं, इससे पहले ही बच्चे हंसने लगे थे। मैडम ने बच्चों की तरफ देखकर पूछा, तुम लोग क्यों हंस रहे हो? बच्चों को यकीन हो गया था कि नई मैडम को कुछ नहीं आता। मॉनिटर वरुण ने हिम्मत करके कहा, मैडम, आपने नौ दूनी सोलह लिखा है, जबकि वह अट्ठारह होना चाहिए। इस पर क्लास के सभी बच्चे ठहाका मारकर हंसने लगे। निशा मैडम भी हंसने लगीं। फिर वह बोलीं, आपके साथ आज यह मेरी पहली क्लास है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप सबको नौ का पहाड़ा याद है। पर क्या आपमें से किसी ने यह सोचा कि मैंने नौ का पहाड़ा ही लिखा है या कुछ और? अब सभी बच्चे खामोश होकर मैडम को बहुत गंभीरता से सुन रहे थे। मैडम बोलीं, यह आपकी क्लास का पहला सबक है कि बिना जाने-समझे किसी पर हंसना बेवकूफी है। दूसरा सबक, हम अक्सर जिंदगी के नकारात्मक पहलू से इतना जुड़ जाते हैं कि सकारात्मक पहलू दिखना ही बंद हो जाता है। जैसे आप सबको नौ के इस पहाड़े में सिर्फ एक गलती दिखी, पर बाकी पहाड़ा सही था, उस बारे में आपने कुछ नहीं कहा। यहां बोर्ड पर भले आप वह गलती देखकर हंस पड़े, पर असल जिंदगी में ऐसा बिल्कुल मत कीजिएगा। और आज की क्लास का तीसरा और आखिरी सबक यह है कि मेरी क्लास में हमेशा हंसते रहिए। ठीक वैसे ही, जैसे आप अभी थोड़ी देर पहले हंस रहे थे। आखिर हम सब दोस्त हैं न? अब जाकर बच्चों की जान में जान आई। सभी बच्चे खुश होकर चिल्लाने लगे, यस मैडम।

हमें दूसरों के जीवन की गलतियां ढूंढने से बचना चाहिए।

खुली खिड़की

तंबाकू की नकदी फसल

तंबाकू का सेवन बेशक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, लेकिन किसानों के लिए यह एक नकदी फसल है। तंबाकू का सर्वाधिक उत्पादन चीन में होता है, जबकि भारत का स्थान इस मामले में तीसरा है।

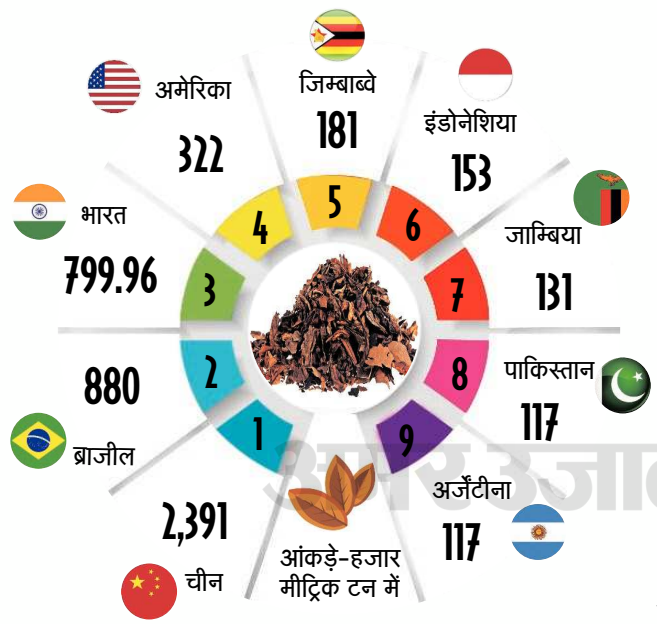

स्रोत- UN FAO

फूल और कांटे

गुलाब के पौधे में फूल और कांटे पास-पास ही उगे हुए थे। दोनों ही खुद को सुखी और अपने साथी को दुखी मान रहे थे। एक दिन अवसर पाकर दोनों ने बातचीत शुरू की और अपने मन की बात दूसरे से कहने लगे।

कांटे ने फूल से कहा, बंधु, तुम्हें अत्याचार पीड़ित जीवन यापन करना पड़ता है। माली तुम्हें निर्दयतापूर्वक भरी जवानी में ही तोड़ ले जाता है। माला बनाने के लिए सुई से तुम्हारा कलेजा छेदता है। फूल ने उत्तर देने से पहले अपने मन की शंका का निवारण करना उचित समझा।

उसने कहा, गुलाब के खूबसूरत पौधे में जन्म लेने पर भी तुम्हें कांटे का कलेवर मिला। जिसने भी तुम्हें छुआ, कोसा और लांछित किया। यह कैसा दुर्भाग्य है, जो विधाता ने तुम्हारे पल्ले बांध दिया है।

सत्संग

एक दूसरे के बारे में दोनों के मूल्यांकन अपनी दृष्टि से सही थे। लेकिन अब फूल ने कहना शुरू किया, मैं खुद को भाग्यवान मानता हूं और माली का कृतज्ञ हूं, जिसने मेरे नगण्य से अस्तित्व को देवताओं और महामानवों के गले का हार बना दिया। अब कांटे ने कहा, मैं किसी की डालियों में लगने नहीं जाता। दूसरों की विभूति हड़पने वाले जब तुम्हारे ऊपर हाथ डालते हैं, तो मेरे माध्यम से उन्हें जवाब मिलता है। अगर मैं अपने सहोदर भ्राता की जीवन रक्षा के कारण बदनाम होता हूं, तो उसके लिए मैं खुद को भाग्यवान मानता हूं।

-संकलित